इकाई 12 नासदीय (10.129), हिरण्यगर्भ (10.121), विष्णु (1.154), सांमनस्य (3.30)

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ऋग्वेद एवं अथर्ववेद के प्रमुख सूक्तों के वर्ण्य-विषय से अवगत हो सकेंगे।
- सृष्टि की उत्पत्ति का प्रतिपादन कर सकेंगे।
- नासदीय, हिरण्यगर्भ, सांमनस्य आदि के कर्म, गुण एवं स्वरूपों के वैदिक आधार से अवगत हो सकेंगे।
- प्रकृत सूक्तों के अध्ययन से वैदिक शब्दावली एवं विषयों का अवगाहन कर सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

अपौरुषेय वेद विश्व के प्राचीनतम साहित्य की आधारशिला हैं। कलिकाल के प्रभाव को पूर्व में जानकर भगवान् वेदव्यास ने मन्त्रों के वैशिष्ट्य, उपयोग, प्रकृति प्रभृति विभिन्न पक्षों का आश्रय ग्रहणकर ऋक्, यजु, साम, अथर्व संहिता के रूप में विभक्त किया। श्रीमद्भागवत महापुराण के **बारहवें स्कन्ध के छठें अध्याय** में उपर्युक्त विभाग का सन्दर्भ प्राप्त होता है, यथा –

> **क्षीणायुषः क्षीणसत्त्वान् दुर्मेधान् वीक्ष्य कालतः।**
> **वेदान् ब्रह्मर्षयो व्यस्यन् हृदिस्थाच्युतचोदिताः।।47।।**

वेद मन्त्रों में जो कतिपय स्थलों पर अनुवाक्/अध्याय/मण्डल/सूक्त इत्यादि के अन्तर्गत संकलित हैं, सृष्टि प्रपंच, ब्रह्म का स्वरूप, स्तुति, यज्ञ प्रक्रिया प्रभृति अन्यान्य विषयों का सन्दर्भ प्राप्त होता है। प्रकृत प्रसंग में आप ऋग्वेद एवं अथर्ववेद के प्रमुख

सूक्तों का अध्ययन करेंगे जो सृष्टि, प्रजापति, माया, विष्णु एवं परस्पर व्यवहारादि विषयों को उपस्थापित करते हैं।

12.2 नासदीय सूक्त (ऋग्वेद 10.129)

ऋषि – परमेष्ठी प्रजापति, देवता – सृष्टि-स्थिति-प्रलय कर्ता परमात्मा।
नासदासीन्नो सदासीत् तदानीं नासीद्रजो नो व्योमा परो यत्।
किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भः किमासीद्गहनं गभीरम्।।1।।

अन्वय – तदानीम् असत् न आसीत् सत् नो आसीत् रजः न आसीत् व्योम नोयत् परः आवरीवः, कुह कस्य शर्मन् गहनं गभीरम्।

शब्दार्थ – न = नहीं, असत् = नामरूपादि रहित अवस्था, आसीत् = थी, नो = नहीं, सत् = नामरूपात्मक अवस्था, आसीत् = थी, तदानीम् = उस समय, न = नहीं, आसीत् = था, रजः = लोक, नो = नहीं, व्योम = आकाश, परः = ऊपर, यत् = जो है, किम् = कौन, आ अवरीवः = आवृत किया था, कुह = कहाँ, कस्य = किसकी, शर्मन् = सुरक्षा में, अम्भः = जल, किम् = क्या (प्रश्न वाचक शब्द), आसीत् = था, गहनम् = अपार, गभीरम् = गहरा।

अनुवाद – उस समय अर्थात् सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व असत् अर्थात् अभावात्मक/सत् भाव तत्त्व भी नहीं था, लोक मृत्यु लोक और पाताल लोक नहीं थे, अन्तरिक्ष नहीं था और ऊपर जो कुछ है वह भी नहीं था, वह आवरण करने वाला तत्त्व कहाँ और किसके संरक्षण में था? उस समय अपार गम्भीर जल था? अर्थात् वे सब नहीं थे।

व्याकरण – **कुह** = किं शब्द से सप्तम्यर्थ में ह प्रत्यय, **कु तिहोः** सूत्र से क्व आदेश।

विशेष – **लोकः** = लोक रजांसि उच्यन्ते (निरुक्त 4.19)

न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्या अह्न आसीत् प्रकेतः।
आनीदवातं स्वधया तदेकं तस्माद्धान्यन्न परः किं चनास।।2।।

अन्वय – तर्हि मृत्युः नासीत् न अमृतम्, रात्र्याः अह्नः प्रकेतः नासीत् तत् आनीत अवातम्, स्वधया एकम् ह तस्मात् अन्यत् किंचन न आस न परः।

शब्दार्थ – न = नहीं, मृत्युः = मृत्यु, आसीत् = थी, अमृतम् = अमृतत्व, न = नहीं, तर्हि = तब, रात्र्याः = रात्री का, अह्नः = दिन का, आसीत् = था, प्रकेतः = चिह्न या भेदात्मक ज्ञान, आनीत् = सांस ले रहा था, अवातम् = बिना वायु का, स्वधया = इच्छाशक्ति से, तत् = वह, एकम् = एक, तस्मात् = उससे, अन्यत् = अलग, न = नहीं, परः = बढ़कर, किम् = कुछ, चन = भी, आस = था।

अनुवाद – उस समय मृत्यु नहीं थी और अमृतत्व भी नहीं था। रात्रि और दिन का ज्ञान भी नहीं था। तब वह (ब्रह्म तत्त्व) ही केवल प्राणयुक्त, क्रियाशून्य और माया के साथ जुड़ा हुआ एक रूप में विद्यमान था, उससे पहले कुछ भी नहीं था।

व्याकरण – **स्वधया** = स्वस्मिन् धीयते ध्रियत आश्रित्य वर्तत इति स्वधा माया।

विशेष – सृष्टि की प्रागवस्था का निर्देश प्राप्त होता है।

तम आसीत् तमसा गूळ्हमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम्।
तुच्छ्येनाम्वपिहितं यदासीत्तपसस्तन्महिनाजायतैकम्।।3।।

नासदीय (10.129), हिरण्यगर्भ (10.121), विष्णु (1.154), सांमनस्य (3.30)

अन्वय – अग्रे तमसा गूढम् तमः आसीत्, अप्रकेतम् इदम् सर्वम् सलिलं, आः यत् आभु तुच्छ्येन अपिहितम् आसीत् तत् एकम् तपस महिना अजायत।

शब्दार्थ – तमः = अन्धकार, आसीत् = था, तमसा = अन्धकार से, गूळहम् = ढंका हुआ, अग्रे = सृष्टि के पहले, अप्रकेतम् = चिह्नरहित/भेदात्मक ज्ञान-रहित, सलिलम् = जल, सर्वम् = सम्पूर्ण, आः = था, इदम् = यह जगत्, तुच्छ्येन = भावरूप अज्ञान से, आभु = सर्वव्यापी, अपिहितम् = आवृत, यत् = जो, आसीत् = स्थित था, तपसः = तपस्या की, तत् = वह, महिना = महिमा से, अजायत = उत्पन्न हुआ, एकम् = एक।

अनुवाद – सृष्ट्युत्पत्ति से पूर्व सर्वत्र अन्धकार था। यह सम्पूर्ण जगत् जलरूप में था। अर्थात् उस समय कार्य और कारण दोनों मिले हुए थे। वह स्थित था। सर्वव्यापी भावरूप अज्ञान था। यह जगत् ईश्वर के संकल्प एवं तप से उत्पन्न हुआ।

व्याकरण – **सलिलम्** = गत्यर्थक षल् धातु से इलच् प्रत्यय।

विशेष – **तपसः** = यः सर्वज्ञः सर्वविद्यस्य ज्ञानमयं तपः (मुण्डकोनिषद1.1.9)।

कामस्तदग्रे समवर्तताधि मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्।
सतो बन्धुमसति निरविन्दन् हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा।।4।।

अन्वय – अग्रे तत् कामः समवर्तत यत् मनसः अधि प्रथमं रेतः आसीत्, सतः बन्धुं कवयः मनीषा हृदि प्रतीष्य असति निरविन्दन्।

शब्दार्थ – कामः = इच्छा, तत् = उसमें, अग्रे = सर्वप्रथम, समवर्तत = उत्पन्न हुआ, अधिमनसः = मन का, रेतः = विकार, प्रथमम् = प्रथम, यत् = जो, आसीत् = था, सतः = नामरूपात्मक जगत् का, बन्धुम् = बन्धन, सम्बन्ध, असति = नामरूपरहित तत्त्व में, निरविन्दन् = पाया, हृदि = अन्तःकरण में, प्रतीष्य = विचार कर, कवयः = बुद्धिमानों ने, मनीषा = प्रज्ञा से।

अनुवाद – सृष्ट्युत्पत्ति के समय सर्वप्रथम काम अर्थात् सृष्टि रचना करने की इच्छा शक्ति उत्पन्न हुई, जो परमेश्वर के मन में सबसे पहला बीजरूप कारण हुआ। बुद्धिमानों ने प्रज्ञा से विचारकर नामरूपात्मक जगत् का कारण नामरूप रहित तत्त्व में पाया।

व्याकरण – **अविन्दन्** = विद् धातु, लङ् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन।

विशेष – **कवयः** = क्रान्तदर्शना अनागतवर्तमानाभिज्ञा योगिनः।

तिरश्चीनो विततो रश्मिरेषामधः स्विदासी३दुपरि स्विदासी३त्।
रेतोधा आसन् महिमान आसन् त्स्वधा अवस्तात् प्रयतिः परस्तात्।।5।।

अन्वय – एषाम् रश्मिः विततः तिरश्चीन अधः स्वित् आसीत्, उपरि स्वित् आसीद्रेतोधाः आसन् महिमानः आसन् स्वधा अवस्तात् प्रयति परस्तात्।

शब्दार्थ – तिरश्चीनः =तिरछा जाने वाला अर्थात् मध्य में, विततः = फैला हुआ था, रश्मिः = किरणों की तरह, एषाम् = उनका, अधः = नीचे, स्वित् = शायद, आसीत् = था, उपरि = ऊपर, स्वित् = शायद, आसीत् = था, रेतोधाः = सृष्टि का बीज धारण

करने वाले, आसन् = थे, महिमानः = आकाशादि महाभूत, आसन् = थे, स्वधा = भोग्य पदार्थ, अवस्तात् = नीचे, प्रयतिः = भोक्ता तत्त्व, परस्तात् = ऊपर।

अनुवाद – उनका (कार्यजाल जो) किरणों के समान शीघ्र फैला हुआ था, क्या वह मध्य में था? अथवा, क्या वह नीचे था? अथवा, क्या वह ऊपर था? (सृष्टि का) बीज धारण करने वाले, (आकाशादि) महाभूत थे, नीचे भोग्य था, ऊपर भोक्ता।

व्याकरण – अवस्तात् = विभाषा परावराभ्याम् सूत्र से प्रथमार्थ में अस्तातिः, अस्ताति च सूत्र से अवर आदेश के स्थान पर अवादेश, प्रकृतिभाव।

विशेष – स्विदासी३ = विचार्यमाणानाम् (पाणिनीय सूत्र 8.2.97) से प्लुत।

को अद्धा वेद क इह प्र वोचत् कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः।
अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाऽथ को वेद यत आबभूव।।6।।

अन्वय – कः अद्धा वेद कः इह प्रवोचत् इयं विसृष्टिः कुतः कुतः आजाता, देवा अस्य विसर्जनेन अर्वाक् अथ कः वेद यतः आ बभूव।

शब्दार्थ – कः = कौन, अद्धा = सही रूप में, वेद = जानता है, कः = कौन, इह = यहाँ, प्र वोचत् = कहेगा, कुतः = कहाँ से, आजाता = उत्पन्न हुई है, कुतः = कहाँ से, इयम् = यह, विसृष्टिः = विविध प्रकार की सृष्टि, अर्वाक् = अर्वाचीन, देवाः = देवता, अस्य = इस, विसर्जनेन = विविधरूपा सृष्टि से, अथ = तब, कः = कौन, वेद = जानता है, यतः = जहाँ से, आबभूव = उत्पन्न हुई है।

अनुवाद – कौन इस बात को यथार्थरूप से जानता है? और कौन इस लोक में सृष्टि के उत्पन्न होने के विवरण को बता सकता है? देवता भी इस विविध प्रकार की सृष्टि उत्पन्न होने के परवर्ती हैं। अतः ये देवगण भी स्वावस्था से पूर्व के विषय में नहीं बता सकते। इसलिए कौन मनुष्य जानता है, जिस कारण यह समस्त संसार उत्पन्न हुआ।

व्याकरण – वेद = ज्ञानार्थक विद् धातु, लट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।

विशेष – सृष्टि उत्पत्ति विषयक अज्ञान की चर्चा प्राप्त होती है।

इयं विसृष्टिर्यत आबभूव यदि वा दधे यदि वा न।
यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन् सो अङ्ग वेद यदि वा न वेद।।7।।

अन्वय – इयं विसृष्टिः यतः आबभूव यदि वा दधे यदि वा न। अस्य यः अध्यक्ष परमे व्योमन् अङ्ग सा वेद यदि न वेद।

शब्दार्थ – इयम् = यह, विसृष्टिः = विविधरूपा सृष्टि, यतः = जहाँ से, आबभूव = उत्पन्न हुई है, यदि = अगर, वा = अथवा, दधे = धारण किया था, यदि = अगर, वा = अथवा, न = नहीं, यः = जो, अस्य = इसका, अध्यक्षः = नियामक, परमे = ऊँचे, व्योमन् = आकाश में, सः = वह, अङ्ग = निश्चित अर्थ का वाचक निपात, वेद = जानता है, यदि = अगर, वा अथवा, न = नहीं, वेद = जानता है।

अनुवाद – यह विविध प्रकार की सृष्टि जिस प्रकार के उपादान और निमित्त कारण से उत्पन्न हुई इसका मुख्य कारण है ईश्वर के द्वारा इसे धारण करना। इसके अतिरिक्त अन्य कोई धारण नहीं कर सकता। इस सृष्टि का जो स्वामी ईश्वर है, अपने प्रकाश/आनन्दस्वरूप में प्रतिष्ठित है। वह आनन्दस्वरूप परमात्मा ही इस विषय को जानता है तदतिरिक्त (इस सृष्टि उत्पत्ति तत्त्व को) कोई नहीं जानता है।

व्याकरण – यतः – जनिकर्तुः प्रकृतिः सूत्र से अपादान संज्ञा में पंचमी में तसिल्।

विशेष – परब्रह्म के सृष्टि ज्ञान वैशिष्ट्य का उल्लेख किया गया है।

नासदीय (10.129), हिरण्यगर्भ (10.121), विष्णु (1.154), सांमनस्य (3.30)

12.3 हिरण्यगर्भ सूक्त (ऋग्वेद 10.121)

ऋषि – हिरण्यगर्भ, देवता – क संज्ञक प्रजापति।

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।1।।

अन्वय – हिरण्यगर्भः अग्रे समवर्तत, जातः भूतस्य एकः पतिः आसीत्, स इमां पृथिवीं उत द्यां दाधार, कस्मै देवाय हविषा विधेम।

शब्दार्थ – हिरण्यगर्भः = स्वर्णमय अंडे का गर्भभूत प्रजापति, अग्रे = सृष्टि की रचना से पूर्व, समवर्तत = उत्पन्न हुआ, जातः = उत्पन्न होते ही, भूतस्य = संसार का, पतिः = ईश्वर, आसीत् = हो गया, सः = संसार का स्वामी बने हुए उसने, इमां = पृथ्वी को, उत = और, द्याम् = आकाश को, दाधार = धारण किया है, कस्मै देवाय = उस प्रजापति नामक देवता के लिए, हविषा = हविष्यान्न द्वारा, विधेम = (हम) प्रस्तुत प्रसन्न करते हैं।

अनुवाद – हिरण्यगर्भ प्रजापति सबसे पूर्व उत्पन्न हुआ। वह उत्पन्न होते ही सारी सृष्टि का एकमात्र स्वामी बना। उसने इस पृथिवी और आकाश को धारण कर लिया। उस प्रजापति देवता का हम हविष्यान्न द्वारा पूजन करें।

व्याकरण – समवर्तत, सम्+वृत्, लङ् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।

विशेष – विश्व की शाश्वत समस्या सृष्ट्युत्पत्ति रहस्य का सन्दर्भ है।

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।2।।

अन्वय – य आत्मदा बलदा यस्य प्रशिषं विश्वे उपासते, यस्य देवाः, यस्य अमृतं, यस्य मृत्युः छाया, कस्मै देवाय हविषा विधेम।

शब्दार्थ – आत्मदा = आत्माओं का प्रवर्तक, बलदा = बलप्रदायक, यस्य = जिस प्रजापति के, प्रशिषं = शासन में, विश्वे = सभी चराचर लोकों के प्राणी, उपासते = उपासना करते हैं, देवाः = अमर लोग/द्योतनशील, अमृतं = अमरता/मरणाभाव, मृत्यु = मरण, छाया = प्रतिमूर्ति, कस्मै देवाय = उस प्रजापति नामक देवता के लिए, हविषा = हविष्यान्न द्वारा, विधेम = (हम) प्रस्तुत प्रसन्न करते हैं।

अनुवाद – जो प्रजापति प्राण तथा बल का प्रदाता है, जिसकी आज्ञा को समस्त संसार और देवता मानते हैं, अमरता एवं मृत्यु जिसकी छाया है। उस प्रजापति देवता का हम हविष्यान्न द्वारा पूजन करें।

व्याकरण – प्रशिषम्, प्र+शास्+क्विप्, द्वितीया विभक्ति, एकवचन।

विशेष – प्रजापति को आत्माओं का प्रवर्तक माना गया है।

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।3।।

अन्वय – यः प्राणतः निमिषतः जगतः महित्वा एकः इत् राजा बभूव। यः अस्य द्विपदः चतुष्पद ईशे। कस्मै देवाय हविषा विधेम।

शब्दार्थ – प्राणतः = प्राणों को धारण करने वालों का, निमिषतः = पलक झपकने वालों का, जगतः = संसार से, महित्वा = महिमा से, एक = अद्वितीय, इत् = ही, राजा = प्रभु, बभूव = हो गया, अस्य = इस दृश्यमान जगत् के, द्विपदः = दो पैरों का आश्रय लेने वाले मनुष्यादि, चतुष्पदः = गौ आदि पशुओं पर, ईशे = शासन करता है, कस्मै देवाय = उस प्रजापति नामक देवता के लिए, हविषा = हविष्यान्न द्वारा, विधेम = (हम) प्रस्तुत प्रसन्न करते हैं।

अनुवाद – जो प्रजापति श्वास लेते हुए तथा पलक झपकते हुए प्राणियों वाले संसार का अपने महत्त्व से अकेले ही स्वामी हो गया, जो इस मनुष्य एवं पक्षी आदि दो पैरों वाले, पशु आदि चार पैरों वाले प्राणियों पर शासन करता है। उस प्रजापति देवता का हम हविष्यान्न द्वारा पूजन करें।

व्याकरण – **ईशे** = ईश् धातु, लट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन, वैदिक रूप, **निमिषतः** = नि+मिष् (स्फुरित होना, चलना), शतृ प्रत्यय, षष्ठी विभक्ति, एकवचन।

विशेष – प्रजापति के प्रभुत्व का उल्लेख किया गया है।

यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसया सहाहुः।
यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम।।4।।

अन्वय – इमे हिमवन्तः यस्य महित्वा, रसया सह समुद्रं यस्य आहुः, यस्य इमाः प्रदिशः यस्य बाहू, कस्मै देवाय हविषा विधेम।

शब्दार्थ – इमे = ये प्रसिद्ध, हिमवन्त = हिमालय पर्वत श्रेणियाँ, यस्य = जिस प्रजापति के, महित्वा = महिमा को, रसया सह = पृथ्वी/नदी समूह के साथ, समुद्रं = पयोधि, आहुः = कहते हैं, इमाः = ये चारों ओर वर्तमान, प्रदिशः = ईशान, वायव्य, नैर्ऋत्य और आग्नेय आदि कोण, बाहू = भुजाओं के समान प्रधान पूर्व, पश्चिम, उत्तर ओर दक्षिण दिशाएं, कस्मै देवाय = उस प्रजापति नामक देवता के लिए, हविषा = हविष्यान्न द्वारा, विधेम = (हम) प्रस्तुत प्रसन्न करते हैं।

अनुवाद – ये हिमालय पर्वत जिसके महत्त्व को बताते हैं, नदी/पृथ्वी के सहित समुद्र जैसी महिमा को प्रकट करते हैं, जिसकी ये दिशाएँ और विदिशाएँ हैं। उस प्रजापति देवता का हम हविष्यान्न द्वारा पूजन करें।

व्याकरण – **हिमवन्तः** = हिमा अस्मिन् सन्तीति हिमवान् ते। हिम+मतुप्, प्रथमा विभक्ति, एकवचन।

विशेष – सम्पूर्ण चराचर जगत् उस प्रजापति की महिमा का ही परिणाम है।

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृळहा येन स्वः स्तभितं येन नाकः।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।5।।

अन्वय – येन द्यौः उग्रा च पृथिवी दृळहा, येनः स्वः स्तभितम् येन नाकः, यः अन्तरिक्षे रजसः विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम।

शब्दार्थ – येन = जिस प्रजापति के द्वारा, द्यौः = अन्तरिक्ष, उग्रा = उग्र रूप में वर्तमान, पृथिवी = भूमि, दृळहा = स्थिरता को ले जाई गई, स्वः = स्वर्ग, स्तभितम् = स्थिर बनाया, नाकः = सूर्य, अन्तरिक्षे = आकाश में, रजसः = लोकों का, विमानः = निर्माता, कस्मै देवाय = उस प्रजापति नामक देवता के लिए, हविषा = हविष्यान्न द्वारा, विधेम = (हम) प्रस्तुत प्रसन्न करते हैं।

अनुवाद – जिसके द्वारा आकाश और उग्र पृथ्वी दृढ़ बनाई गई। जिसने स्वर्ग को स्थिर बनाया तथा सूर्य को आकाश में स्थापित किया। जिसने आकाश में जल उत्पन्न किया। उस प्रजापति देवता का हम हविष्यान्न द्वारा पूजन करें।

व्याकरण – **दृळहा** = यह 'दृढा' का वैदिक रूप है, दृह्+क्त+टाप्।

विशेष – प्रजापति को ही सम्पूर्ण सृष्टि का जनक माना गया है।

> **यं क्रन्दसी अवसा तस्तभाने अभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने।**
> **यत्राधिसूर उदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम।।6।।**

अन्वय – रेजमाने क्रन्दसी अवसा तस्तभाने य मनसा अभि ऐक्षेताम्, यत्र अधिसूरः उदितः विभाति, कस्मै देवाय हविषा विधेम।

शब्दार्थ – रेजमाने = प्रकाशमान, क्रन्दसी = द्यावापृथिवी पर, अवसा = रक्षा द्वारा, तस्तभाने = स्थिरता को प्राप्त होने पर, यः = जिस प्रजापति को, मनसा = अपनी बुद्धि से, अभि ऐक्षेताम् = देखा था, यत्र = जिस प्रजापति में, अधि = आधारभूत होने पर, सूरः = सूर्य, उदितः = उदय होता हुआ, विभाति = प्रकाशित/शोभित होता है, कस्मै देवाय = उस प्रजापति नामक देवता के लिए, हविषा = हविष्यान्न द्वारा, विधेम = (हम) प्रस्तुत प्रसन्न करते हैं।

अनुवाद – प्रकाशमान आकाश और पृथ्वी, प्रजापति से प्राप्त की गई रक्षा द्वारा स्थिर होकर, जिस प्रजापति को अपने महत्त्व का कारण मानते हैं। जिसके आधार पर सूर्य उदित होकर शोभा देता है। उस प्रजापति देवता का हम हविष्यान्न द्वारा पूजन करें।

व्याकरण – **तस्तभाने** = स्तभ्+कानच्+टाप् तस्तभाना, प्रथमा विभक्ति, द्विवचन।

विशेष – आकाश और पृथ्वी की रक्षा करने का श्रेय प्रजापति को है।

> **आपो ह यद् बृहतीर्विश्वमायन्गर्भं दधाना जनयन्तीरग्निम्।**
> **ततो देवानां समवर्ततासुरेकः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।7।।**

अन्वय – बृहती अग्निं जनयन्तीः, गर्भम् दधानाः यत् आपः ह विश्वमायन् ततः देवानाम् एकः असुः समवर्तत, कस्मै देवाय हविषा विधेम।

शब्दार्थ – बृहतीः = महान्/विस्तृत, अग्निम् = वैश्वानर अग्नि को, जनयन्तीः = उत्पन्न करती हुई, गर्भम् = हिरण्मय अंडे के गर्भभूत प्रजापति को, दधानाः = धारण करती हुई, यत् = जो, आपः = जल, ह = ही, विश्वम् = सम्पूर्ण जगत में, आयन = फैल गया, ततः = गर्भभूत प्रजापति से, देवानाम् = देवताओं तथा अन्य प्राणियों का, एकः = अद्वितीय, असुः = प्राणात्मक वायु, समवर्तत = उत्पन्न हुआ, कस्मै देवाय = उस प्रजापति नामक देवता के लिए, हविषा = हविष्यान्न द्वारा, विधेम = (हम) प्रस्तुत प्रसन्न करते हैं।

अनुवाद – विस्तृत जलराशि अग्नि को उत्पन्न करती हुई और हिरण्यगर्भ को धारण करती हुई सारे विश्व में फैल गई। उससे दैवी और मानुषी सृष्टि में अद्वितीय प्राणवायु रूप में यह उत्पन्न हुआ। हम उस प्रजापतिदेव को हविष्यान्न द्वारा प्रसन्न करते हैं। उस प्रजापति देवता का हम हविष्यान्न द्वारा पूजन करें।

व्याकरण – **जनयन्तीः** = जन् धातु+णिच्+शतृ+ङीप्, प्रथमा विभक्ति, बहुवचन का वैदिक रूप। लौकिक संस्कृत में 'जनयन्त्यः' रूप बनता है। **आयन्** = 'इण् गतौ' धातु, लङ् लकार (स्त्रीलिंग) प्रथम पुरुष, बहुवचन।

विशेष – सृष्टि के आदिकाल में जब सर्वत्र विशाल जलराशि फैली हुई थी। उस समय भी हिरण्यगर्भ प्रजापति विद्यमान था।

यश्चिदापो महिना पर्यपश्यद् दक्षं दधाना जनयन्तीर्यज्ञम्।
यो देवेष्वधिदेव एक आसीत् कस्मै देवाय हविषा विधेम।।8।।

अन्वय – यः चित् यज्ञं जनयन्ती, दक्षं दधानाः, आपः महिना पर्यपश्यत्। यः देवेषु एकः अधिदेवः आसीत्। कस्मै देवाय हविषा विधेम।

शब्दार्थ – यः = जिस प्रजापति ने, चित् = एकाकी ही, यज्ञं = यज्ञात्मक कर्म को, जनयन्ती = उत्पन्न करती हुई, दक्षं = चातुर्य/प्रजापति को, दधाना = धारण करती हुई, आपः = जल, महिना = महत्त्व से, पर्यपश्यत् = चारों ओर देखा, यः = जो प्रजापति, देवेषु = देवताओं के मध्य, अधिदेवः = सर्वोपरि विराजमान होता हुआ, आसीत् = था, कस्मै देवाय = उस प्रजापति नामक देवता के लिए, हविषा = हविष्यान्न द्वारा, विधेम = (हम) प्रस्तुत प्रसन्न करते हैं।

अनुवाद – जिसने यज्ञ को उत्पन्न करने वाले, प्रजापति को धारण करने वाले जलों को अपने माहात्म्य से परिपूर्ण रूप में देखा, जो देवताओं का स्वयं अधीश्वर है। उस प्रजापति देवता का हम हविष्यान्न द्वारा पूजन करें।

व्याकरण – **दधानाः** = धा धातु+शानच्, स्त्रीलिंग द्वितीया विभक्ति बहुवचन।

विशेष – प्रजापति के वैशिष्ट्य का वर्णन किया गया है।

मा नो हिंसीज्जनिता यः पृथिव्या यो वा दिवं सत्यधर्मा जजान।
यश्चापश्चन्द्रा बृहतीर्जजान कस्मै देवाय हविषा विधेम।। 9।।

अन्वय – नः मा हिंसीत् यः पृथिव्याः जनिता, यः वा सत्यधर्मा दिवं जजान, सः चन्द्राः बृहतीः आपः जजान, कस्मै देवाय हविषा विधेम।

शब्दार्थ – मा = नहीं, नः = हमको, हिंसीत् = मारे, यः = जो कि, पृथिव्याः = पृथ्वी का, जनिता = उत्पन्न करने वाला, वा = अथवा, सत्याधर्मा = नियमों को धारण करते हुए, जजान = उत्पन्न किया है, दिवं = स्वर्ग को, यः च = और जिसने, चन्द्रा = आनन्ददायक, बृहती = महान्, आपः =जलराशि को, कस्मै देवाय = उस प्रजापति नामक देवता के लिए, हविषा = हविष्यान्न द्वारा, विधेम = (हम) प्रस्तुत प्रसन्न करते हैं।

अनुवाद – वह हिरण्यगर्भ प्रजापति हमारी हिंसा न करें जो पृथ्वी लोक को उत्पन्न करने वाला है, सत्यधर्मा जिसने द्युलोक को उत्पन्न किया है, जिसने आनन्द प्रदान

करने वाले महान् जलराशि को उत्पन्न किया है कः नाम वाले उस प्रजापति देवता का हम हविष्यान्न द्वारा पूजन करें।

व्याकरण – **जनिता** = जन् धातु+णिच्+तृच् का पुंल्लिंग, प्रथमा एकवचन का वैदिक रूप।

विशेष – **प्रजापति** = सृष्टि का रचयिता है।

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।
यत् कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्।।10।।

अन्वय – प्रजापते त्वत् अन्यः एतानि विश्वा जातानि ता न परिबभूव। यत् कामाः ते जुहुमः तत् नः अस्तु। वयम् रयीणाम् पतयः स्याम।

शब्दार्थ – विश्वा जातानि = सम्पूर्ण उत्पन्न हुए पदार्थों का, परिबभूव = व्याप्त किए हुए है, यत्कामाः = जिस फल की कामना करते हुए, जुहुमः = आहुति देते है, नः = हमें, अस्तु = हो, रयीणाम् = धनों के, पतयः = स्वामी, स्याम = हो।

अनुवाद – हे प्रजापति, आपके अतिरिक्त कोई दूसरा इन वर्तमान सभी उत्पन्न पदार्थों को व्याप्त नहीं कर सकता है। हम जिस कामना से युक्त होकर तुम्हें हवि प्रदान करते हैं, हमारी वह कामना पूर्ण हो तथा हम लोग धनों के स्वामी हो जायें।

व्याकरण – **विश्वा** = यह वैदिक रूप है। लोक में विश्वानि बनता है।

विशेष – **वयं स्याम पतयो रयीणाम्** = वेद में सभी दीर्घायु, धनवान् एवं पुत्रवान् हों, एवंविध प्रार्थना अनेकत्र की गई है।

12.4 विष्णु सूक्त (ऋग्वेद 1.154)

ऋषि – दीर्घतमा, देवता – विष्णु।
विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजांसि।
यो अस्कभायदुत्तरं सधस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायः।। 1।।

अन्वय – विष्णोः नु कं वीर्याणि प्रवोचं, यः पार्थिवानि रजांसि विममे, यःत्रेधा विचक्रमाणः उरुगायःउत्तरं सधस्थं अस्कभायत्।

शब्दार्थ – **विष्णोः** = विष्णु के,**वीर्याणि** = पराक्रम का,**नुकम्** = शीघ्र,**प्रवोचम्** = वर्णन करता हूँ, **त्रेधा** = तीन प्रकार से,**विचक्रमाणः** = विचरण करते हुए, **यः** = जिसने,**पार्थिवानि** = पृथिवी आदि, **रजांसि** = लोकों का, **विममे** = निर्माण किया/बनाया,**उरुगायः** = जनसमूह द्वारा प्रशंसित, **यः** = जिस (विष्णु)ने, **उत्तरम्**= अधिक ऊँचे, **सधस्थम्** = लोकों का,**अस्कभायत्**= बनाया है।

अनुवाद – मैं विष्णु के पराक्रम का शीघ्र वर्णन करता हूँ। तीन प्रकार से विचरण करते हुए जिस विष्णु नेपृथ्वी आदि लोकों का निर्माण किया/मापा है, जनसमूह द्वारा प्रशंसित जिस विष्णु ने अधिक ऊँचे लोकों को बनाया है।

व्याकरण – **विष्णोः** = 'विष्लृ व्याप्तौ' धातु से विष्+नु विष्णु, षष्ठी विभक्ति, **प्रवोचम्** = प्र+वच् धातु लङ् लकार, उत्तम पुरुष, एकवचन, **अस्कभायत्** = 'स्कम्भ' धातु लङ्

लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन। यहाँ 'श्ना' को वैदिक ''शायच्'आदेश हुआ लोक में 'अस्कभ्नात्' रूप होगा।

विशेष – छन्द की पूर्ति के लिए 'वीर्याणि' का 'वीरियाणि' एवं 'त्रेधा' का 'त्रयेधा' उच्चारण करना चाहिए।

प्र तद् विष्णुः स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः।
यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा ।। 2।।

अन्वय – यस्य उरुषु त्रिषु विक्रमणेषु विश्वा भुवनानि अधिक्षियन्ति तत् विष्णुः वीर्येण प्रस्तवते, भीमः कुचरः गिरिष्ठाः मृगः न।

शब्दार्थ – **यस्य** = जिसके, **उरुषु** = विस्तीर्ण/बड़े, **त्रिषु** = तीन, **विक्रमणेषु** = पाद विन्यासों, **विश्वा** = सम्पूर्ण, **भुवनानि** = लोक, **अधिक्षियन्ति** = निवास करते हैं, **तत्** = वह (विष्णु), **वीर्येण** = स्वपराक्रम के कारण, **प्रस्तवते** = प्रशंसा किया जाता है, **भीमः** = भयानक, **कुचरः**= कुत्सित/हिंसक कार्यकर्त्ता, **गिरिष्ठाः** = पर्वतों में रहने वाला, **मृगः** = सिंह, **न**= जैसे।

अनुवाद – जिस विष्णु के विस्तीर्ण लम्बे तीन पदक्रमों में सम्पूर्ण लोक आ जाते हैं/आश्रय लेकर निवास करते हैं। उस विष्णु की वीर कार्यों से स्तुति उसी प्रकार की जाती है, जिस प्रकार भयानक, कुत्सित, हिंसा आदिकर्म करने वाले, पर्वतादि उन्नत प्रदेशों में रहने वाले सिंहादि की स्तुति की जाती है।

व्याकरण – **स्तवते** ='स्तु' धातु से कर्म कारक में लट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन, **विश्वा** = प्रथमा विभक्ति, बहुवचन। लोक में 'विश्वानि' रूप बनता है।

विशेष – सायण के मतानुसार गिरिष्ठाः का अर्थ उन्नत प्रदेश में रहने वाला है।

प्र विष्णवे शूषमेतु मन्म गिरिक्षित उरुगायाय वृष्णे।
य इदं दीर्घं प्रयतं सधस्थमेको विममे त्रिभिरित् पदेभिः ।।3।।

अन्वय – गिरिक्षते उरुगायाय वृष्णे विष्णवे शूषम् मन्म एतु, यः एकः इत् त्रिभिः पदेभिः इदं दीर्घं प्रयतं सधस्थं विममे।

शब्दार्थ – **गिरिक्षिते** = पर्वत पर निवास करने वाले, **उरुगायाय** = विस्तृत कीर्ति वाले, **वृष्णे**= कामनाओं के वर्षक, **विष्णवे** = सर्वव्यापक विष्णु के लिए, **शूषम्** = बलयुक्त, **मन्म** = स्तोत्र, **एतु** = पहुँचे, **यः** = जिसने, **एकः** = अकेले, **इत्** = ही, **त्रिभिः** = तीन, **पदेभिः** = पदों के द्वारा, **इदं दीर्घं** = इस विस्तृत, **प्रयतं** = निश्चित, **सधस्थम्** = लोकत्रयी को, **विममे** = बनाया।

अनुवाद – पर्वत पर निवास करने वाले, विस्तृत कीर्तियुक्त, कामनाओं के पूरक, सर्वव्यापक (विष्णु) के लिए मेरी बलवती प्रार्थना पहुँचे, जिसने बिना किसी की सहायता के अकेले ही तीन पदों में इस विस्तृत त्रिलोक को बनाया/त्रिलोक को तीन पादन्यास से माप लिया था।

व्याकरण – **एतु** = इण् धातु लोट् प्रथम पुरुष, एकवचन, **विममे** = वि+मा लिट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।

विशेष – ऋषि विश्वस्त है कि उसकी प्रार्थना सर्वव्यापक विष्णु के पास पहुँचती है।

नासदीय (10.129),
हिरण्यगर्भ (10.121),
विष्णु (1.154),
सांमनस्य (3.30)

यस्य त्री पूर्णा मधुना पदान्यक्षीयमाणा स्वधया मदन्ति।
य उ त्रिधातु पृथिवीमुत द्यामेको दाधार भुवनानि विश्वा।।4।।

अन्वय – अक्षीयमाणाः यस्य मधुना पदानि स्वधया मदन्ति यः एकः त्रिधातु पृथिवी उत द्यां विश्व भुवनानि च दाधार।

शब्दार्थ – **यस्य** = जिस विष्णु के, **मधुना** = मधुर अमृत से, **पूर्णा** = भरे हुए, **त्रि पदानि** = तीन पद, **अक्षीयमाणा** = क्षीण न होते हुए, **स्वधया** = अन्न के द्वारा, **मदन्ति** = आनन्दित करते हैं, **यः एकः** = जिस अकेले ने ही, **द्यां** = द्युलोक को, **त्रिधातु** = तीन धातुओं, **दाधार** = धारण करता है।

अनुवाद – जिसके अक्षय मधुपूर्ण तीन पाद प्रक्रम मनुष्यों को अपनी शक्ति से आनन्दित करते हैं। जो अकेले ही पृथिवी, जल और तेज रूप तीन धातुओं पृथिवी, आकाश और सम्पूर्ण लोकों को धारण करते हैं (उस विष्णु के पास मेरी प्रार्थना पहुँचे)।

व्याकरण – **अक्षीयमाणा** = अ+क्षी+शानच्, **दाधार** = धृ+लङ् प्रथम पुरुष एकवचन।

विशेष – विष्णु विस्तीर्ण, व्यापक तथा अप्रतिहत गतिवाले हैं।

तदस्य प्रियमभि पाथो अश्यां नरो यत्र देवयवो मदन्ति।
उरुक्रमस्य स हि बन्धुरित्था विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः।।5।।

अन्वय – अस्य प्रियं तत्पाथः अभि अश्याम्, यत्र देवयवः नरः मदन्ति। उरुक्रमस्य विष्णोः परमे पदे मध्व उत्सः, इत्था स हि बन्धुः।

शब्दार्थ – **अस्य** = इस विष्णु के, **तत्पाथः** = उस लोक को, **अभि अश्याम्** = प्राप्त करूँ, **देवयवः** = विष्णु देवता के भक्त, **मदन्ति** = आनन्दपूर्वक रहते हैं, **उरुक्रमस्य** = परम पराक्रम वाले, **परमे पदे** = परम पद में, लोक में, **मध्व**= मधु का, **उत्सः** = झरना, **इत्था** = इस प्रकार, **बन्धुः** = भाई है।

अनुवाद – इस विष्णु के उस प्रिय लोक को प्राप्त करूँ, जहाँ पर देवताओं के इच्छुक मनुष्य आनन्द करते हैं। विशाल गति वाले विष्णु के श्रेष्ठ लोक में एक मधु का सरोवर है। इस प्रकार निश्चित ही वह सबका मित्र है।

व्याकरण – **देवयवः** = देवयु का प्रथमा विभक्ति बहुवचन।

विशेष – विष्णु के तृतीय पद/स्वर्ग में जहाँ पर पितृगण यज्ञ के साथ सोम रस का पान करते है।

ता वां वास्तून्युश्मसि गमध्यै, यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः।
अत्राह तदुरुगायस्य वृष्णः परमं पदमव भाति भूरि।।6।।

अन्वय – यत्र भूरिशृङ्गाः गावः अयासः, वाम् ता वास्तूनि गमध्यै उश्मसि। अत्र आह उरुगायस्य वृष्णः तत् परमम् पदम् भूरि अव भाति।

शब्दार्थ – **भूरिशृङ्गाः** = बड़े ऊँचे सींगों वाली, **गावः** = गायें/किरणें, **अयासः** = निवास करती हैं, **वां** = तुम्हारे लिए, **तां वास्तूनि** = उन स्थानों को, **गमध्यै** = जाने के लिए, **उश्मसि** = माना करते हैं, **अत्र** = यहाँ, **आह** = निश्चय से, **उरुगायस्य** =

अति यशस्वी, **वृष्णः** = कामनाओं के दाता, भूरि = अत्यधिक, **अवभाति** = सुशोभित है।

अनुवाद – हम तुम्हारे लिए उन स्थानों को जाने की कामना करते हैं जहाँ अति भास्वर किरणें फैली हुई हैं। इस स्थान में ही अतियशस्वी विष्णु जो कि कामनाओं के दाता हैं, का वह परम पद सुशोभित है।

व्याकरण – **गमध्यै** = गम् धातु से 'तुमुन्' प्रत्यय, वैदिक 'अध्यैन्' प्रत्यय, **अयास** = 'इण् गतौ' धातु अच्-अय प्रत्यय, प्रथमा विभक्ति, बहुवचन का वैदिक रूप।

विशेष – विष्णु के परम पद में पहुँचने की कामना की है।

12.5 सांमनस्य सूक्त (अथर्ववेद 3.30)

ऋषि – अथर्वा, देवता – सामनस्य।
सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्यो अन्यमभिहर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या।।1।।

अन्वय – (हे विवदमानाः जनाः) वः अविद्वेषं सांमनस्यं सहृदयं कृणोमि। (ततो यूयमपि) जातं वत्सम् अघ्न्या इव अन्योऽन्यं अभि हर्यत।

शब्दार्थ – **सहृदयम्** = समान हृदय वाला, **सांमनस्यम्** = समान मन वाला, **अविद्वेषं** = द्वेषरहित, **कृणोमि** = बनाता हूँ, **वः** = तुम लोगों को, **अन्यः** = एक, **अन्यम्** = दूसरे को, **अभि हर्यत** = प्रेम करो, **वत्सम्** = बछड़े को, **जातमिव** = जिस प्रकार उत्पन्न हुये को, **अघ्न्या** = अवध्या गाय।

अनुवाद – (हे विवाद करने वाले मनुष्यों,) तुम लोगों को समान हृदय वाला, समान मनवाला तथा द्वेष से रहित बनाता हूँ। एक दूसरे से प्रेम करो, जिस प्रकार गाय उत्पन्न बछड़े को (प्यार करती है)।

व्याकरण – **सांमनस्यम्** = सहृदय समान हृदय से युक्त, **अघ्न्या** = हन्तुम् अयोग्या, गाय।

विशेष – मनुष्यों को परस्पर प्रेम करने का निर्देश है, जैसे गाय अपने बछड़े से व्यवहार करती है तद्वत्।

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुवतीं वाचं वदतु शन्तिवाम्।।2।।

अन्वय – पुत्रः पितुः अनुव्रतः, माता च संमनाः भवतु। पत्ये जाया मधुमतीं शन्तिवां वाचं वदतु।

शब्दार्थ – **अनुव्रतः** = आज्ञापालक, **पितुः** = पिता का, **पुत्रः** = पुत्र, **माता** = माता, **भवतु** = हो, **संमनाः** = एक मनवाली, **जाया** = पत्नी, **पत्ये** = पति के लिये, **मधुमतीम्** = मीठी, **वाचम्** = वाणी, **वदतु** = बोले, **शन्तिवाम्** = कल्याणकारी/सुखकरी।

अनुवाद – पुत्र पिता का आज्ञापालक हो, माता (पुत्रादिकों के साथ) एक मनवाली हो। पत्नी पति के लिये मीठी तथा कल्याणकारी वाणी बोले।

व्याकरण – **पत्ये** = पतिः समास एव इत्यनेन घि संज्ञाया नियमात् केवलस्य अभावात् तत्कार्याभावे यण्।

विशेष – परिवार में सदस्य किस प्रकार वाग्व्यवहार करें, का निर्देश प्राप्त होता है।

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।

सम्यंचः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।।3।।

अन्वय – भ्राता भ्रातरं मा द्विक्षत्। उत स्वसारं स्वसा मा द्विक्षत्। (ते सर्वे) सम्यंचः सव्रताः भूत्वा भद्रया वाचं वदतु।

शब्दार्थ – **मा** = मत, **भ्राता** = भाई, **भ्रातरम्** = भाई से, **द्विक्षत्** = द्वेष करे, **मा** = मत, **स्वसारम्** = बहन को, **उत** = और, **स्वसा** = बहन, **सम्यंचः** = समान गति वाले, **सव्रताः** = समान कार्य वाले, **भूत्वा** = होकर, **वाचम्** = वाणी, **वदत** = बोलो, **भद्रया** = शिष्टता से।

अनुवाद – भाई-भाई से द्वेष न करे, बहन-बहन से न (द्वेष करे), समान गति वाले तथा समान कार्य वाले होकर (तुम लोग) शिष्टता से वचन बोलो।

व्याकरण – **वदतु** = यहाँ व्यत्यय से एकवचन प्राप्त हुआ है।

विशेष – भ्राता एवं भगिनी को भी मधुर व्यवहार करने का निर्देश प्राप्त होता है।

येन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः।
तत् कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः।।4।।

अन्वय – येन देवाः न वियन्ति, नो च मिथः विद्विषते। तत् संज्ञानम् ब्रह्म वः गृहे पुरुषेभ्यः कृण्मः।

शब्दार्थ – **येन** = जिससे, **देवाः** = देवता, **न** = नहीं, **वियन्ति** = अलग होते हैं, **नो** = न तो, **च** = और, **विद्विषते** = द्वेष करते हैं, **मिथः** =परस्पर, **तत्** = उस, **कृण्मः** = करते हैं, **ब्रह्म** = प्रार्थना, **वः** = तुम्हारे, **गृहे** = घर पर, **संज्ञानम्** = समान ज्ञान अर्थात् सामंजस्य के निमित्त, **पुरुषेभ्यः** = मनुष्यों के लिये।

अनुवाद – जिससे देवता अलग नहीं जाते और न तो परस्पर द्वेष ही करते हैं, तुम्हारे घर पर (तुम्हारे) मनुष्यों के लिये उस सामंजस्य के निमित्त (हम) प्रार्थना करते हैं।

व्याकरण – **गृहे पुरुषेभ्यः** = यहाँ तादर्थ्य में चतुर्थी प्राप्त हुई है।

विशेष – घर के पुरुषों में एकमति सम्पादन का निर्देश प्राप्त होता है।

ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि यौष्ट संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः।
अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त एत सध्रीचीनान् वः संमनसस्कृणोमि।।5।।

अन्वय – ज्यायास्वन्तः चित्तिनः संराधयन्तः सधुराः चरन्तः (यूयम्) मा वि यौष्ट। अन्यः अन्यस्मै वल्गु वदन्तः ऐत (आ+इत)। (हे जनाः) वः सध्रीचीनान् संमनसः कृणोमि।

शब्दार्थ – **ज्यायास्वन्तः** = श्रेष्ठ गुणों से युक्त, **चित्तिनः** = समान अन्तःकरण वाले, **मा** = मत **वि यौष्ट** = अलग होओ, **संराधयन्तः** = एकसाथ साधना करते हुये, **सधुराः** = कंधा मिलाकर, **चरन्तः** = चलते हुये, **अन्यः** = एक, **अन्यस्मै** = दूसरे के लिए, **वल्गु** = प्रियवचन, **वदन्तः** = बोलते हुये, **आ इत** = यहाँ आओ, **सध्रीचीनान्**

= एकसाथ चलने वाला अर्थात् एकसाथ कार्य में प्रवृत्त होने वाला, **वः** = तुम लोगों को, **संमनसः** = समान मन वाला, **कृणोमि** = बनाता हूँ।

अनुवाद – श्रेष्ठ गुणों से युक्त, समान चित्त वाले, एक साथ साधना करते हुये, कंधे से कंधा मिलाकर चलते हुये, (तुम लोग) वियुक्त मत होओ। परस्पर प्रिय वचन बोलते हुये आओ। मैं तुम लोगों को एक कार्य में प्रवृत्त होने वाला तथा समान मन वाला बनाता हूँ।

व्याकरण – **सध्रीचीनान्** = सह अंचतीति विगृह्य अंचतेः ऋत्विग्० सूत्र से क्विन्। सहस्य सध्रिः सूत्र से सध्र्यादेश।

विशेष – सभी छोटे बड़े का ध्यानपूर्वक व्यवहार हो, सभी प्रिय बोलें तथा कभी अलग न हों, एक साथ रहें।

समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि।
समयञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः।।6।।

अन्वय – वः समानी प्रपा (भवतु) अन्नभागः सह एव युनज्मि। अहं वः समाने योक्त्रे सह युनज्मि। अपि च सम्यंचः सन्तः अग्निं सपर्यत। (कथमिव) अरा नाभिमिव अभितः।

शब्दार्थ – **समानी** = एक, **प्रपा** = पानीशाला, **सह** = एकसाथ, **वः** = तुम लोगों का, **अन्नभागः** = भोजन, **समाने** = समान, **योक्त्रे** = बंधन में, **सह** = एकसाथ, **वः** = तुम लोगों को, **युनज्मि** = बांधता हूँ, **सम्यंचः** = एकसाथ होकर, **अग्निम्** = अग्नि की, **सपर्यत** = उपासना करो, **अराः** = पहिये की तीलियां, **नाभिमिव** = जिस प्रकार धुरे को, **अभितः** = चारों तरफ से घेरकर स्थित रहती हैं।

अनुवाद – तुम लोगों की पानीशाला एक हो, भोजन एक साथ हो, तुम लोगों को समान बन्धन में बांधता हूँ। एकसाथ होकर अग्नि की उपासना करो, जिस प्रकार चक्र की तीलियां धुरे के चारों तरफ स्थित रहती हैं।

व्याकरण – **नाभिम्** = अरा रथचक्रस्य छिद्रं नाभिः, अभितः परितः० सूत्र से द्वितीया।

विशेष – परस्पर सौहार्द्र धारण करने का निर्देश प्राप्त होता है।

सध्रीचीनान् वः संमनसस्कृणोम्येकश्नुष्टीन्त्संवननेन सर्वान्।
देवा इवामृतं रक्षमाणाः सायंप्रातः सौमनसो वो अस्तु।।7।।

अन्वय – सध्रीचीनान् संमनसः वः कृणोमि। तथा वः एकश्नुष्टीन् संवननेन सर्वान्। यथा अमृतम् रक्षमाणाः देवाः सौमनसः (भवन्ति), एवं वः सायं प्रातः (काले) सौमनसः (अस्तु)।

शब्दार्थ – **सध्रीचीनान्** = एकसाथ जाने वाला, **वः** = तुम लोगों को, **संमनसः** = एक मन वाला, **कृणोमि** = बनाता हूँ, **एकश्नुश्टीम्** = एकसाथ भोजन करने वाला, **संवननेन** = वशीकरण मन्त्र से, **सर्वान्** = सबको, **देवा इव** = देवों की तरह, **अमृतम्** = अमृत की, **रक्षमाणाः** = रक्षा करते हुये, **सायंप्रातः** = शाम तथा सुबह अर्थात् प्रत्येक क्षण, **सौमनसः** = एक समान मन, **वः** = तुम लोगों का, **अस्तु** = हो।

अनुवाद – तुम लोगों को एकसाथ जाने वाला तथा एक मन वाला बनाता हूँ। अमृत की रक्षा करते हुये देवों की तरह, प्रत्येक क्षण तुम लोगों का मन एकसाथ रहे।

व्याकरण – **एकश्नुष्टिम्** = एकविध व्यापन।

विशेष – सभी के मानस व्यवहार में एकरूपता का निर्देश प्राप्त होता है।

नासदीय (10.129), हिरण्यगर्भ (10.121), विष्णु (1.154), सांमनस्य (3.30)

12.6 सारांश

ऋग्वेद में वर्णित नासदीय सूक्त सृष्टि रचना विवरण का प्राचीनतम स्रोत है। सृष्टि रचना से पूर्व सत् असत् गुणों की सत्ता नहीं थी, पृथिवी, पाताल एवं अन्तरिक्ष भी नहीं थे। अमृत तथा मृत्यु का अभाव था। सर्वत्र जलमय था। ईश्वर के मन में इच्छा का उदय हुआ तथा उसी का परिणाम सृष्टि की उत्पत्ति थी। सृष्टि रचना ईश्वरीय क्रिया थी, जो अन्य के लिए अज्ञेय है।

सुवर्णमय अण्डाकार (हिरण्यगर्भ) से प्रजापति की उत्पत्ति हुई। प्रजापति ने धरती तथा आकाश को धारण किया। प्रजापति ही सृष्टि में प्राण एवं बल का प्रदाता बना, उसकी आज्ञा सभी मानते थे, चर-अचर की उत्पत्ति का नियामक वही था। वह पर्वतों एवं लोकों का रचयिता था, वह पंचतत्त्वों का भी जनक था तथा उसका एक नाम **क** (प्रजापति) कहा गया है।

विष्णु ने तीन पदों से पृथिवी, पाताल एवं अन्तरिक्ष को मापा तथा लोकों का निर्माण किया, वह स्तुति के योग्य है। वह लोकों को धारण करने वाला है। वह सभी का मित्र है एवं यशस्वी है।

सांमनस्य सूक्त में मानव समाज में परस्पर एकता तथा स्नेह का व्यवहार करने का निर्देश है। वह प्रेम ऐसा हो, जैसे एक गाय अपने बछड़े से प्यार करती है। पुत्र-पिता, पुत्र-माता तथा पति-पत्नी में प्रेम हो। भाई-भाई से तथा बहन-बहन से प्रेम करे। सभी एकसाथ भोजन करें तथा सभी का मन एक हो।

12.7 शब्दावली

परवर्ती	–	बाद वाला / अनन्तर
प्रभुत्व	–	प्रभाव / शासन
मानुषी	–	मनुष्य से उत्पन्न / सम्बन्धी
हविष्यान्न	–	हवि के रूप में प्रयुक्त किया जाने वाला अन्न
अनेकत्र	–	बहुत से स्थलों / स्थानों पर
पादन्यास	–	पैर का रखना / स्थापित करना
अप्रतिहत	–	लगातार / निरन्तर
वाग्व्यवहार	–	वाणी का व्यवहार
एकमति	–	एक मन / विचार
सौहार्द्र	–	सुहृद् मित्रवत् व्यवहार / प्रेम / भाव
एकविध	–	एक प्रकार

12.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. **द न्यू वैदिक सिलेक्शन** प्रथम एवं द्वितीय भाग, तैलंग एवं चौबे, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी।

2. **ऋग्वेद संहिता,** सायण भाष्य, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नई दिल्ली।
3. **अथर्ववेद संहिता,** सायण भाष्य, विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर।

12.9 अभ्यास प्रश्न

1. नासदीय सूक्त के आधार पर सृष्टि उत्पत्ति की पूर्वावस्था का वर्णन कीजिए।
2. नासदीय सूक्त के आधार पर सृष्ट्युत्पत्ति प्रक्रिया पर प्रकाश डालिए।
3. **''तम आसीत् तमसा गूळहमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम्।**

   तुच्छ्येनाभ्वपिहितं यदासीत्तपसस्तन्महिनाजायतैकम्।।'' मन्त्र की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए।
4. हिरण्यगर्भ सूक्त के आधार पर प्रजापति के स्वरूप का वर्णन कीजिए।
5. विष्णु सूक्त के आधार पर विष्णु देवता के मुख्य कर्मों का प्रतिपादन कीजिए।
6. **'ता वां वास्तून्युश्मसि गमध्यै, यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः।**

   अत्राह तदुरुगायस्य वृष्णः परमं पदमव भाति भूरि।।'' मन्त्र की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए।
7. सांमनस्य सूक्त के आधार पर परिवार की कल्पना सुस्पष्ट कीजिए।